सम्पादकीय

सपने कौन देखता है?

गाड़ी में बैठे मेरे सहयात्री के मोबाइल पर एक आधुनिक गीत बजा, गीत की लाइन थी – 'ये आँखें उसी दम हो जाए अंधी, जो देखें सपना और किसी का'। गीत की इस पंक्ति ने अन्तरात्मा में अनेक नए-नए विचारों का उद्‌गम कर दिया। मैंने स्वयं से पूछा कि क्या नेत्र न होने पर सपने नहीं देखे जा सकते। ईश्वरीय ज्ञान के आधार से उत्तर सामने आया कि देखे जा सकते हैं क्योंकि चाहे आँखों से देखे जाएँ, चाहे आँखें न होने पर देखे जाएँ, देखने वाला कोई और ही होता है।

आत्मा में अनेक जन्मों के संस्कार भरे पड़े हैं

सपने देखने वाली, आँखों की मालिक, आँखों की नियन्त्रक आत्मा है, जो अति सूक्ष्म है। दिन के उजाले में खुली आँखों के माध्यम से देखती है और रात के अंधेरे में, आँखों के बंद हो जाने के बावजूद भी देखती है। उजाले में वर्तमान संसार को देखती है और रात के अंधेरे में भूतकाल, भविष्यकाल या कल्पना-काल को देखती है। आँखें ना हों तो भी चेतना अपना कार्य करती रहती है, इसे हम सोल (Soul), साइकि (Psyche), रूह, ज्योति, आत्मा, प्राण, नूर, प्रकाश आदि नाम देते हैं। यह स्वयं नहीं दिखती लेकिन देख सब कुछ लेती है, अनुभव सब कुछ कर लेती है। अनेक सूरदासों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से चेतना के भटकन, विचरण और चेतना में उभरती इच्छाओं को व्यक्त किया है। इसका अर्थ यह है कि आँखें ना होने पर भी भटकने का कार्य जारी है क्योंकि वास्तव में भटकने वाली सत्ता आत्मा है, ना कि आँखें। जिस प्रकार टी.वी. में या कंप्यूटर में सॉफ्ट कॉपी के सहयोग से प्राचीनकाल में घटी घटना को अथवा भविष्य की कल्पना या आशंका को हम सामने घट रही घटना की तरह देखते हैं, उसी प्रकार आत्मा में भी अनेक घटनाओं और दृश्यों की सॉफ्ट कॉपी भरी है। बाहरी जगत से नाता न रहने पर वह उस सॉफ्ट कॉपी को चला देती है जिसमें कुछ वास्तविक होता है और कुछ उसके संस्कारों के आधार पर मिश्रित और काल्पनिक और कुछ में भविष्य की कल्पनाएँ और आशंकाएँ भी भरी होती हैं।

सपने – सूक्ष्म संस्कारों का प्रकटीकरण

सपने आत्मा की पवित्रता की डिग्री मापने के अच्छे आधार हैं। जिस प्रकार कई काले कारनामे, दिन में नहीं, रात में किए जाते हैं, इसी प्रकार जिन संस्कारों को आत्मा समाज के भय से दिन में दबाकर रखती है,

छिपाकर रखती है वे दबे हुए संस्कार सपने में उभर कर आते हैं। इस प्रकार, सपनों से हमें पता पड़ता है कि कौन-सा सूक्ष्म संस्कार अभी भी मुझ में है। मान लो, कोई साधक समझता है कि मेरा गुस्सा खत्म हो गया है पर यदि सपने में उसे गुस्सा आता है तो इसका अर्थ है कि संस्कार अभी पूरी तरह मिटा नहीं। अभी इस पर और बारीकी से ध्यान देने की ज़रूरत है। इसी प्रकार सपने में झूठ, चोरी, हिंसा, लोभ, काम आदि के वशीभूत होना माना अभी इन्हें जड़ से मिटाने के लिए अधिक सूक्ष्म पुरुषार्थ की ज़रूरत है। इस संदर्भ में राजा जनक के सपने से जुड़ी हुई एक प्रसिद्ध पौराणिक कथा इस प्रकार है –

स्वर्ण महल में सोने के पलंग पर सोए हुए राजा जनक ने एक बार एक सपना देखा कि वह पड़ोसी राजा के द्वारा लूट लिया गया है और भूख-प्यास से बेहाल होकर जंगल में भटक रहा है। भटकते-भटकते एक मंदिर

के द्वार पर पहुँच गया और भोजन के लिए हाथ फैला दिया। एक सेवक ने भोजन बनाने वाले बर्तनों की तली में चिपका हुआ थोड़ा-सा भोजन खुरच कर ज्यों ही उसके हाथ पर रखा, आसमान में उड़ती हुई एक चील की नज़र पड़ गई। राजा के हाथ पर चील की चोंच का वार हुआ, वह दर्द से चीख उठा और उसकी आँखें खुल गई। नौकर-चाकर दौड़े आए। कोई हाथ-पाँव और कोई माथा सहलाने लगा। राजा के मुख पर केवल एक ही प्रश्न था, सत्य क्या है? सत्य क्या है? वास्तव में मैं राजा हूँ और मैंने भिखारी का सपना देखा है या वास्तव में मैं भिखारी हूँ और राजा होने का सपना देख रहा हूँ? राजगुरु अष्टावक्र ने राजा के इस प्रश्न का समाधान करते हुए कहा – हे राजन्! सत्य न यह है, सत्य न वह है। सत्य तो कोई तीसरी सत्ता है जिसने दोनों को देखा।

एक आत्मा देह द्वारा कई पार्ट प्ले करती है

प्रश्न उठता है कि यह तीसरी सत्ता कौन है जो दोनों घटनाओं के समय मौजूद थी और दोनों को देख रही थी? यह तीसरी सत्ता आत्मा ही है जो सत्य है और सनातन है। एक भूमिका है राजा की, दूसरी भूमिका है भिखारी की। जब राजा का रूप प्रकट होता है तो भिखारी का रूप नदारद हो जाता है और जब भिखारी का रूप प्रकट होता है तो राजा का रूप नदारद हो जाता है लेकिन इस तीसरी सत्ता अर्थात् आत्मा के पास दोनों अनुभव मौजूद हैं। यह दोनों रूपों की साक्षी है क्योंकि राजाई ठाठ की अनुभूति भी इसी ने की और भिखारी की बदहाली का अनुभव भी इसी में समाहित है। किसी का राजा होना असत्य है क्योंकि वह सदा राजा नहीं रहेगा और किसी का भिखारी होना भी असत्य है क्योंकि वह सदा भिखारी नहीं रहेगा लेकिन उसका आत्मा होना सत्य है क्योंकि राजा और भिखारी दोनों आवरणों को ओढ़ने वाली एक ही आत्मा है। अत: जागृत अवस्था में इंद्रियों के द्वारा देखने, सुनने, खाने-पीने, बोलने वाली भी आत्मा ही है और सुषुप्त अवस्था में स्वप्न लोक में विचरण करने वाली भी आत्मा ही है। मृत व्यक्ति सपने नहीं देख सकता क्योंकि आँखें मौजूद होते भी, सपने देखने वाली आत्मा उसमें मौजूद नहीं होती।

आत्मा ही कर्त्ता और भोक्ता है

यह आत्मा नाम की सत्ता इस शरीर का संचालन कैसे करती है, वह कैसी है, उसकी शक्तियाँ कौन-कौन सी हैं, शरीर में वह कहाँ स्थित है ... आदि सभी प्रश्नों के उत्तर स्वयं परमपिता परमात्मा शिव वर्तमान समय दे रहे हैं। भगवान कहते हैं, **जड़ शरीर को चलाने वाली चेतन आत्मा सितारे की तरह चमकने वाली, अति सूक्ष्म दिव्य प्रकाश का कण है। यह मानव की भ्रकुटि के मध्य में विराजमान रहती है। विज्ञान की भाषा में कहें तो हाइपोथेलामस के बिल्कुल समीप इसका निवास है। शरीर रूपी रथ की यही रथी है जो मन, बुद्धि और संस्कारों सहित सर्व कर्मेन्द्रियों की लगाम को नियंत्रित करती है। आत्मा शस्त्र से कट नहीं सकती, जल से गल नहीं सकती, वायु से उड़ नहीं सकती और अग्नि इसे जला नहीं सकती। यह अजर, अमर है। सत्य और चैतन्य है। शीशे में रोज चेहरा देखने के बावजूद, विभिन्न प्रकार के प्रसाधनों से इसकी रक्षा करने के बावजूद यह झुर्रीदार हो गया पर आत्मा जिस दिन इस शरीर में आई थी, उसी प्रकार की है। वह न बच्चा, न जवान, न बूढ़ा बनती है। आयु के प्रभाव से सर्वथा मुक्त है। हाँ, आत्मा सतो, रजो, तमो अवस्थाओं से अवश्य गुजरती है। आत्मा ही कर्म करती और भोगती है अर्थात् यही कर्त्ता और भोक्ता है। आँखों से गलत कर्म करने वाले को हम पाप-आँख न कहकर पाप-आत्मा ही कहते हैं क्योंकि आँखों के द्वारा पाप कर्म करने वाली आत्मा ही है। यही बात अन्य इंद्रियों द्वारा किए गए कर्मों के साथ भी लागू होती है इसलिए स्वच्छता आत्मा की चाहिए जो ईश्वरीय ज्ञान से ही संभव है।**

आत्माएँ अनेक हैं और परमात्मा एक। अनेक आत्माओं में जो परम है वही परमात्मा है। अत: आत्मा और परमात्मा एक नहीं, अलग-अलग हैं।

परमात्मा जन्म-मरण के बंधन से सदा मुक्त हैं जबकि आत्मा में अधिकतम 84 जन्मों के संस्कार भरे रहते हैं। आत्मा इस रंगमंच पर श्रेष्ठ कर्म करने आती है और पार्ट पूरा होने पर, कर्मों अनुसार अगला जन्म धारण कर लेती है। सृष्टि चक्र के अंत में, परमात्मा पिता द्वारा ज्ञान प्राप्त करके ही उसे अपने घर परमधाम लौटने का सुअवसर मिलता है। आत्मा परमात्मा का अंश नहीं, वंश है। जैसे पुत्र, पिता का वंशज होता है, न कि अंश। अंश का अर्थ होता है टुकड़ा और किसी भी चेतन वस्तु के टुकड़े नहीं हो सकते। आत्मा के ज्ञान को उपरोक्त यथार्थ रीति से समझने और मनन करने पर ही परमात्मा से मिलन का आनन्द मनाया जा सकता है। इसके लिए परमात्मा पिता का यथार्थ परिचय भी उतना ही आवश्यक है।

आत्मा का इंद्रियों से डिटैच होना ही निद्रा है

एक शाश्वत प्रश्न है कि सोता कौन है? आत्मा या शरीर? अगर हम कहें कि शरीर सोता है तो यह उचित नहीं लगता क्योंकि शरीर की अधिकतम क्रियाएँ सुषुप्त अवस्था में भी जारी रहती हैं। हृदय की धड़कन, खून का संचरण, श्वास का आवागमन, गुर्दे का कार्य – ये सब चलते रहते हैं। रात का खाया हुआ भोजन सुबह तक पच चुका होता है, तो इससे सिद्ध होता है कि शरीर नहीं सोता, तो फिर सोता कौन है? अगर हम कहें, आत्मा सो जाती है तो आत्मा तो एक ऐसा चैतन्य अणु है जिसके साथ सोने या जागने जैसी क्रियाएँ जुड़ी हुई नहीं हैं। वह तो एक चैतन्य प्रकाश कण है। तो फिर सोने की क्रिया को किस तरह परिभाषित किया जाए? वास्तव में, आत्मा शरीर रूपी मोटर की ड्राइवर है। जैसे एक ड्राइवर चालक की सीट पर बैठकर स्टेयरिंग, गीयर, रेस, ब्रेक आदि का उपयुक्त प्रयोग करता है तो गाड़ी चलती है। मान लो, वह चालक की सीट पर तो बैठा है लेकिन गाड़ी के इन सभी पुर्जों को चलाता नहीं है तो जैसेकि गाड़ी में होते हुए भी गाड़ी के बंधन से मुक्त, न्यारा और उपराम है। इसी प्रकार, आत्मा जब कर्मेन्द्रियों का प्रयोग करते-करते थकान महसूस करती है तो कुछ समय के लिए इनसे न्यारी (Detach) हो जाती है, इनकी लगाम को ढीला छोड़ देती है जिससे आराम महसूस करती है। यह आराम उसे शक्ति प्रदान करता है। न्यारेपन के द्वारा शक्ति प्राप्त करके वह पुन: इंद्रियों के संचालन में अपने को सक्षम महसूस करती है। इसी को 'निद्रा' के रूप में परिभाषित किया जाता है। यह एक स्वाभाविक शारीरिक क्रिया है जो हर मनुष्य को प्रकृति की तरफ से वरदान रूप में मिली हुई है। नींद एक प्राकृतिक क्रिया है लेकिन राजयोग के अभ्यास के द्वारा हम जागृत अवस्था में भी कुछ मिनट या अधिक समय के लिए आत्मा को इंद्रियों से डिटैच कर सकते हैं। इस डिटैच अवस्था में उसे असीम शान्ति, सुख, आराम का अनुभव होता है। कार्य की भागमभाग और जल्दबाज़ी आत्मा को तनावग्रस्त और बोझिल बना देती है लेकिन बीच-बीच में इंद्रियों से न्यारी होकर आत्मा, तनाव और बोझ से भी न्यारी हो जाती है **इसलिए समय और परिस्थितियों की मांग है कि बाहरी जगत की आपाधापी का सामना आंतरिक शांति की शक्ति से किया जाए। यदि बाहरी भाग-दौड़ और जल्दबाज़ी हमें परेशान करती है तो भीतर की शान्ति या भीतर की ओर झांकने की आदत; आत्मावलोकन का संस्कार हमें शांति की ओर ले जाता है। बाहर अगर समस्या है तो भीतर समाधान है। बाहर अगर अशांति है तो भीतर शांति है। बाहर अगर उलझन है तो भीतर सुलझाव है। बाहर अगर प्रश्नचिन्ह है तो भीतर उसका उत्तर है। बाहर अगर अस्थिरता है तो भीतर स्थिरता और दृढ़ता। अत: कर्म से भागने या कर्म का संन्यास करने की आवश्यकता नहीं है बल्कि कर्म करते हुए कर्त्ता आत्मा को बीच-बीच में शांति की शक्ति से सींचने की जरूरत है तभी हम कर्म करते कर्मबंधनों से मुक्त रह सकते हैं।**

❖